ISSN 2455-5169

परिवर्तन : साहित्य, संस्कृति एवं सिनेमा की वैचारिकी

कहानी

पत्थर

डॉ. नीरज वर्मा

लेक्चरर,
अंबिकापुर, जिला - सरगुजा
छत्तीसगढ़
drnirajvermaneer@gmail.com

मई का महीना शहर के पोर-पोर में धंस कर धधक रहा था। पेंड़, पाखी, मनुज, जानवर, सब यहाँ-वहाँ जल-भून रहे थे। अगर कुछ सहज और उर्जावान थी तो वह थी धूप के साथ पसरी हुई भूख। सूर्य के सर संधान से तपकर लाल हुई धरती के सीने पर नंगे पांव रिक्शा लेकर दौड़ता जोत राम उतनी ही सहजता से रिक्षा चला रहा था जितनी सहजता से जनवरी की कड़कती ठडं वाली रात में चलाता है। सड़क के किनारे तेरह वर्ष का छोरा डुग-डुगी बजा कर बुढ़िया बाल बेच ही रहा था। गन्ने वाला अपनी पूरी ताकत लगा कर गन्ने का रस निकाल ही रहा था। उसे तो देख कर ऐसा लग रहा था मानो खुद को निचोड़ कर आने-जाने वाले राहगीरों की प्यास बूझा रहा हो। उपर से देखने पर तो सब कुछ सामान्य लग रहा था पर ध्यान से देखने पर लोगों के चेहरे मुरझाए हुए दिख रहे थे। वैसे शहर भले धू-धू कर रहा हो लोग बरसो रे मेघा बरसो वाले गीत गुन-गुना रहे हों पर चमचमाते हुए स्टोन क्लिनिक आसरा के मनमोहक लॉन की शोभा बड़-बड़े होटलों को टक्कर दे रहे थे।

आंख चुंधिया देने वाले भव्य इमारत 'आसरा' के प्रवेश द्वार के सामने चेहरे पर खुंटियाये कच्ची-पक्की दाढ़ी में धूप लपेटे रामलोचन तिवारी झुलनिया तिवारी के साथ पंहुचे ही थे कि कांच का चमचमाता हुआ दरवाजा खुला और द्वार पाल के द्वारा रजिस्टर में कुछ दर्ज करने के पश्चात एक गोरी चिट्टी सी दिखती कहिए गोरी मेम पहिया वाली कुर्सी लेकर तिवारी जी के सामने खड़ी थी। दीवारों पर लगे चम-चमाते ग्रिनाईट पर उभर रही अपनी तस्वीर की तुलना उस युवती से करके तिवारी जी का रोम-रोम बदबू से भर गया था। उनकी नज़र अपने उस चितकबरे जूते पर टिक गई थी जिसे खरीदने के बाद सिर्फ खोलने-पहनने का काम ही किया गया था। जूता झाड़ा-पोंछा भी जाता है ऐसा मन में विचार भी नहीं आया था। पर आज न जाने क्यों उघरी हुई आस्तिन वाली शर्ट, पैंट की फटी हुई मोहरी बार-बार हाथ डालने और निकालने से फटा हुआ पैंट का पाकेट सब कुछ एक साथ तिवारी जी को दिखने लगे थे।

पर गोरी चिट्टी मेम को कहां कुछ दिख रहा था। उसने पूरी विनम्रता से कहा था व्हील चेयर पर बैठ जाइए सर प्लीज.... बी.ए. पास तिवारी जी सर और प्लीज का आशय खूब समझते थे। तीन हजार रुपल्ली वाली डाटा इंट्री ऑपरेटर की नौकरी जब से लगी थी सर-सर कहते-कहते मुंह घीस गया था। कोइ उन्हे सर कहेगा ऐसा तो सपने में भी नहीं देखा था। चाहे जो हो सम्मान व्यक्ति को गर्व से भर देता है तिवारी जी भी थोड़ी देर के लिए गर्वोन्मत हुए थे। पर झुलनिया की फटी हुई एड़ी पर नज़र पड़ते ही सम पर आ गए थे। झिझकते हुए कहा था नहीं-नहीं ऐसी कोई बात नहीं है, वो तो कभी कभार थोड़ा बहुत दर्द हो जाता है। अभी तो एक दम आराम है।

था भी ऐसा ही कुछ दर्द तो कभी कभार ही होता था वो भी एक निश्चित समय पर और निश्चित भाग में ही होता था हालाकि निश्चित समय और निश्चित भाग का उल्लेख तिवारी जी चाह कर भी नहीं कर पाए थे। अब जवान जहान लड़की से कैसे कहते कि, पेशाब करते वक्त कुछ अटका-अटका सा लगता है। और पेशाब भी मुआं न आंए देखता है न दांए जब मन किया फुल प्रेशर के साथ लटक जाता है। करने बैठो तो चुरकी भर पेशाब उतरता है और दर्द इतना कि, जान निकल जाए, भरी जवानी में ऐसा रोग लग जाएगा सोचा भी न था।

शादी का अभी साल भर भी पूरा नहीं हुआ था झुलनिया तो दबे जबान कह भी दी थी.... पिता जी लेन-देन में क्या कमी किये थे, अब करम में दुरूख ही बदा हो तो कोई क्या करे। बात समझ में आते ही तिवारी जी को न चाह कर भी झुलनिया का दिल दुखाना पड़ा था।

डपटते हुए कहे थे... "अब तुझे ऐसी क्या कमी हो गई है जो इतना कुढ़-ठुनक रही है, रोग दुःख किसे नहीं होता । फिर ऐसा रोग भी तो नहीं है कि, मैं तान कर घर में पड़ा हूँ और तूझे रोटी-चोटी के लिए तरसना पड़ रहा है।"

"मुझे हुआ ही क्या है? पेशाब मे जलन ही तो है हो सकता है पानी वानी की कमी से हो गया होगा।"

"पर खून भी तो आ जाता है सोच-सोच कर कलेजा बैठ जाता है, जाने कैसी-कैसी बीमारी चली है।"- कहते-कहते झुलनिया कुढ़ जाती थी। झुलनिया अपनी बात प्रायः सहजता से ही कहती थी पर बात इतनी ठण्डाई से पूरी की जाती थी कि, तिवारी जी का दिल बैठ जाता था।

प्रत्येक मनुष्य के भीतर उसके संघर्ष की अंर्तकथा प्रवाहित होती है। कुछ लोग अपने संघर्ष से प्रेरित हो कर मोहन से गांधी बन जाते हैं और कुछ सघर्ष सरिता में तैरते हुए अनंत दूरी तक चले जाते हैं अपनी संघर्ष गाथा गाते गुनगुनाते।

झुलनिया भी अपने बाप के संघर्ष और उसमें अपनी सहभगिता की मर्मिक कथा सुनाते-सुनाते वर्तमान के तार जोड़ कर कहती थी... "महादेव जी ना करें अगर कुछ हो हुआ गया तो हम तो अनाथ हो जाएगें। ऐसी कोई नौकरी भी नहीं है कि, पेंशन...!"- एकदम ठण्डे मन से बोले गए झुलनिया की बात सुन कर तिवारी जी का कलेजा धक् से रह जाता था, कहीं सही में कुछ हो हुआ गया तो जवान-जहान बहुरिया किसके दरवाजे लोढ़ेगी पंडित की जात किसी की रखैल बन कर निकल-नुकला गई तो पिता जी गांव भर में नाक धरने लायक नहीं रहेंगे। हमारी आत्मा भी कहाँ चैन से रह पाएगी। कल ही शास्त्री जी प्रवचन दे रहे थे, आत्मा बस अपना वस्त्र बदलती है मरती नहीं है उसे न कभी आग जला सकती है न वह पानी में भीगती है न किसी औजार से कटती है। शरीर बदलने के बाद भी झुलनिया की चिंता लगी रहेगी। धर्म, दर्षन, समाज सब कुछ सोच-सोच कर रामलोचन तिवारी का देह सिप-सिपा जाता था। ऐसा लगता मानो पूरा का पूरा देह नमक छोड़ रहा है। वैसे भी मध्यम वर्ग वर्तमान से ज्यादा भविष्य में तैरता है। वर्तमान का मजा तो निम्न और उच्च वर्ग लेता है।

रोग का निदान करने के देशी नुश्खे राम लोचन प्रायः किया करते थे। किसी ने बताया था कुछ नहीं बस पेशाब की थैली में पत्थर है अनठेल पानी पीओ और कुलथी का दाल खाओ सब ठीक हो जाएगा। पण्डित जी भी अंधा-धूंध पानी पीते और कुलथी का दाल फुला कर उबाल कर जैसे भी हो भीतर उतार लिया करते थे। पर नसीब का लेख मानो पत्थर की लकीर काहु के मिटाए कहाँ मिटत है। जाने अचानक क्या हुआ एक दिन पेशाब एक दम बंद हो गया। जान तो जैसे आपा-धापी में फंस गई। होली का दिन पूरा का पूरा शहर गांजा-भांग में मस्त डाक्टर तो खोजे नहीं मिल रहा था। जब जान आफत में फंसी हो तो देवी, दुर्गा, ओझा सब की आवष्यकता एक साथ महसुस होती है। झुलनिया मन ही मन देवी के सामने खूब गिड़गिड़ाई पर देवी जल्दी कहाँ सुनती है। सोचा बकरी वाले बाबा ही कुछ चमत्कार कर दें। हुआ भी कुछ ऐसा ही बीस रू. दे कर बाबा से ताबीज बंधवा कर घर आ ही रहे थे कि, रास्ते में डा. प्रसाद का क्लिनिक खुला मिल गया। चमत्कार देखिए कि डाक्टर साहब की दवाई के एक खुराक से ही पेट में जमा पूरा का पूरा पानी एक झटके में हर-हरा कर बाहर तिवारी जी को खुल कर पेशाब हुआ। उसी दिन से झुलनिया बकरी वाले बाबा की चेरी हो गई थी। बाबा की तारीफ करते हुए कहती... बाबा के हाथ में बड़ा जस है बाबा अगर झाड़े न होते तो कहाँ तो डाक्टर मिलता और कहाँ पेशाब उतरता सोच-

सोच कर हमारा शरीर ठंडा हुआ जा रहा था, पर रामलोचन तिवारी व्यक्ति पूजा के सख्त विरोधी थे। पण्डित ओझा के नाम पर तो छूट गाली बकते थे। झुलनिया को बार-बार समझाते सब महामाया के आशिरबाद का फल है माई का इशारा न होता तो पत्ता भी न खड़के पर झुलनिया की नजर में महामाया चाहे जो हो है तो पत्थर की मूर्ति ही और बकरी वाले बाबा साच्छात इंसान एक बार मंतर फूंका नहीं कि, सब अलाय-बलाय दूर, कहाँ तो डाक्टर ही नहीं मिल रहा था और अब डाक्टर भी मिल गया और एक खुराक में मर्ज भी फूर्र।

बात अलग है कि, बाबा जी रोग को महीना दो महीना के लिए ही आगे सरका सके थे रोग ठीक कर दें इतनी ताकत उनमे कहाँ थी। तभी तो जब दूसरी बार पेशाब अटका तो झुलनिया ने घर सर पर उठा लिया। पिता जी से हथजोड़ी विनती करके बारह हजार का कर्जा काढ़ा तीन हजार रुपए तिवारी जी का तनख्वाह और पांच सौ रुपए इधर उधर का रेगजी कुल मिला कर जब साढ़े पन्द्रह हजार हो गए तो मन को थोड़ा बल मिला, तिवारी जी लाख ना नुकुर करते रहे पर औरत की जीद के आगे जब राम जी हार गये और चौदह बरस सीता जी को साथ में लिए-लिए वन-वन डोलते रहे तो यह तो तिवारी जी थे। शहर के डाक्टर से पता लेकर रायपुर आना ही पड़ा था। राजधानी का अस्पताल कोई गाँव का खैराती अस्पताल तो था नहीं कि, सुरती खैनी फांकते रोगी को खटिया में टागें पहुँच गये। साफ सुथरे होटल को फेल करते अस्पताल में रोगी अपने पैरो पर चल कर डाक्टर के पास जाएगा तो पैसा किस बात की देगा। पर्याप्त ना-नूकूर करने के बाद तिवारी जी को तीन चक्के वाली कुर्सी पर बैठना ही पड़ा था। अब कुर्सी पर लद ही गए थे तो सरक सुरक कर आराम से बैठने में कोई बुराई नहीं दिखी चमकदार फर्श और मखमली दीवारो वाले हॉस्पीटल में प्रवेश करते ही झुलनिया का वज़ूद ही बदल गया था। तिवारी जी के साथ कदम से कदम मिला कर चलती झुलनिया को एक स्थान पर एंट्री रजिस्टर में हस्ताक्षर करने के लिए रोका गया तो बड़े अदब से चेहरे पर उगे हुए पसीने को साड़ी के पल्लू से पोंछते हुए अंग्रेजी वाला दस्तखत किया था। और पेन लेते वक्त प्लीज और देते वक्त थैंक्यू कहना नहीं भूली थी एक जगह पर झुलनिया को थोड़ा धक्का भी लगा था जब गोरी वाली मेम ने अदब से झुलनिया को लिफ्ट पर चढ़ने से मना कर दिया था। जब झुलनिया को कहा गया कि, लिफ्ट सिर्फ पेशेंट के लिए है अटेंडेंट को सीढ़ी चढ़ कर आना होगा, तो तिवारी जी भी थोड़ा असमंजस में पड़ गये थे। झुलनिया के चेहरे पर खीझ की हल्की लकीर भी दिखी थी पर दोनां के मध्य गोरी मेम तटस्थ भाव से खड़ी थी। तिवारी जी भी क्या करते सिकुड़े-सकुचाए तीन पहिए वाली कुर्सी समेत लिफ्ट के भीतर प्रवेश कर गए। वैसे तो एक छत से दूसरे छत पर जाने में बमुश्किल एक मिनट लगा होगा पर वह एक मिनट तिवारी जी के वर्षो पर भारी था। गोरी

चिट्टी मेम के देह से उड़ने वाली भीनी-भीनी खूशबु ने तो मानो तिवारी जी का अंतस भींगा दिया था। हालांकि उसने अपने लम्बे घने बालों को चोटी में समेट रखा था पर एहसास पर पाबंदी कहाँ होती है। वैसे भी जनरल आफ न्यूरो साइंस में लेख लिख कर तंत्रिका वैज्ञानिक ने सिद्ध कर दिया है कि, लड़की की हथेली का स्पर्श यदि पुरूष की हथेली से हो जाए तो एक अलग रोमांच पैदा होता है। बात अलग है कि, लिफ्ट से निकलते ही झुलनिया पूर्ववत तिवारी जी के साथ कदम ताल करने लगी थी। पर स्पर्श के आंतरिक एहसास को महसूस करने से कैसे रोका जा सकता था। स्पर्श तो खून की धारा के साथ प्रवाहित हो रहा था।

तिवारी जी ने पाँच तारा होटल के शानो-शौकत के विषय में सुना भर था देखा नहीं था। आज देख भी लिया, उन्हे ऐसा लग रहा था मानो किसी पाँच तारा होटल के डिलक्स कमरे में बैठे हों। तिवारी जी की कुर्सी डा. रतलानी के मन मोह लेने वाले भव्य कमरे में खड़ी करने के बाद गोरी चिट्टी मेम अदब से बाहर चली गई थी अब तिवारी जी के खून का प्रवाह भी सम पर आ गया था। झुलनिया तिवारी भी माथे पर उग आए पसीने को हल्के हाथों से पोंछ कर किनारे खड़ी हो गई थी।

मखमली दीवारों वाला डाक्टर रतलानी का कमरा कमरा न हो कर बड़ा सा हॉल था। जिसके ठीक मध्य में रखे टेबल पर सजे लैपटॉप, नक्काशी दार टेबल लैंप, पेन स्टैंड, डिजिटल कैलेंडर, आदि देख कर लगता था मानो कोई महाराजा बैठा हो।

टेबल पर पेपर वेट नचाते हुए सोनोग्राफी पर उड़ती हुई नज़र डाल कर डा. रतलानी ने कहा था- "आपके युरिन ब्लैडर में कैलिकुली है। इस सोनोग्राफी के हिसाब से तो इसका आकार काफी बड़ा है। पर दूसरे के द्वारा किए गये सोनोग्राफी पर मुझे विश्वास नहीं होता है। क्योकि अनएक्सपर्ट रेडियोलाजिस्ट कैलिकुली का साइज ठीक से मेजर नहीं कर पाते है। तुम्हे फिर से सोनोग्राफी कराना होगा।"

डा. रतलानी के चेहरे पर मुस्कुराहट की हल्की सी रेखा तैर गई थी चेहरा तो सौम्य नज़र आ रहा था पर वाणी कठोर थी।

"लिथोटेपसी...!" भारी भरकम शब्द सुन कर झुलनिया थोड़ा घबराइ थी।

"लिथोस्ट्रेप्सी पत्थरी तोड़ने का आधुनिक तकनीक है इस तकनीक में बिना चिर-फाड़ किए आपके युरिन ब्लैडर का पत्थर तोड़ दिया जाएगा.." डाक्टर साहब शिक्षकों की भांति अपनी बात समझा

रहे थे। "वैसे यदि इस सानोग्राफी को ही सच मान लिया जाए तो आपका रोग काफी बढ़ चुका है। यदि इसको निकाला नहीं गया तो पत्थर कैंसर का कारण भी हो सकता है।" हालाकि डॉ . रतलानी बात एक दम सपाट ढंग से कर रहे थे। पर उनके चेहरे की ताजगी बरकरार थी। डाक्टर साहब के द्वारा बीच-बीच में प्रयोग किए जाने वाले चिकित्सा विज्ञान के शब्द तिवारी जी के सिर के उपर से निकल जा रहे थे।

धीरे से बस इतना ही कह पाए थे- "इस पर खर्च कितना होगा ?"

"खर्च की चिंता करेंगे तो हो चुका इलाज।" -डॉ . रतलानी थोड़ा झुंझलाए थे।

"नहीं सोच रहा हूँ अभी उतनी परेशानी नहीं है अगर कुछ दवा लिख देते तो... फिर कुछ समय बाद आकर इलाज करा लेता।" - तिवारी जी अपनी उघड़ी किनारे वाली शर्ट की बांह को धीरे-धीरे खोल रहे थे,और अपने पैर के अगूंठे से फर्श को कुरेदने का का प्रयास करके हकलाए थे।तलवों पर उग आए पसीने और मैल मिलकर डाक्टर साहब के चम-चमाते विट्रिफाइड टाइल्स को गंदा कर रहे थे। जिसे देख कर झुलनिया को भीतर से शर्मिंदगी का एहसास हो रहा था।

तिवारी जी के अन्तरूप्रदेश का जलधि झझांवातो से घिर गया था, अन्दर का द्वन्द चेहरे पर आकृति ले रहा था डॉ . रतलानी तिवारी जी के द्वन्द को देख रहे थे या देख कर भी अनदेखा कर रहे थे इस विषय में कुछ भी कह पना संभव नहीं था। डॉ . साहब तो बस अपने धुन में थे। झिड़कते हुए उन्होने कहा था – "अजीब बेवकूफ किस्म के आदमी हो यार.. रोग बढ़ा जा रहा है, और तुम पैसों का मोह कर रहे हो।"

"डाक्टर साहब कह रहे हैं तो इलाज करवा लीजिए न... जान है तबे पइसा है," -झुलनिया कुनमुनाई थी। झुलनिया का सह मिलते ही डॉ . रतलानी ने तत्काल घंटी बजा दिया था। इस बार गोरी-चिट्टी मेम ने स्थान परिवर्तन कर लिया था। इस बार झक्क सफेद लिबास में लिपटा बार्ड ब्वाय तीन पहिए वाली कुर्सी को ढकेल कर पर्दे से आड़ किए गये कमरेनुमा स्थान पर ले गया था जहाँ तिवारी जी को हॉस्पिटल वाला कपड़ा पहनने को दे दिया गया था। वैसे हॉस्पिटल का कपड़ा किसी नवाब के गाउन से कम न था।

चाहे जो हो तिवारी जी को एक अजीब सी गंध नाक में घुसती हुई प्रतीत हो रही थी। तिवारी जी तीन चक्के वाली कुर्सी पर लदे-लदे इस कमरे से उस कमरे तक घुमते रहे और जितने देवी-देवता याद आते गये सबको रोग न निकलने पर कुछ न कुछ चढ़ावा चढ़ाने का आश्वाशन देते गए। पर सेंसेक्स का

भाव जब आसमान चढ़ा हो तो रूपए दो रूपए में सुनने की फुर्सत किस भगवान को होगी। लोग तो लाखों-करोंड़ो दान कर देते हैं। जब बड़-बड़े साधु महात्मा ऊँचे-ऊँचे स्वर्ण आसनों पर विराज कर हजारों लाखों की संख्या में भक्तों को एक साथ भगवान का दर्शन करा रहे हों तो व्यस्ता के इस दौर में किस भगवान के पास तिवारी जी के लिये समय होगा। अब पत्थर पेट में था तो था मेज़रमेंट एक्सपर्ट रेडियोलॉजिस्ट करे या अनएक्सपर्ट रेडियोलॉजिस्ट। तिवारी जी के ना नुकुर करने के बावजूद पत्थर की पुष्टी एक्सरे के द्वारा भी करा ली गई थी।

लगभग तीन घण्टे पहियों वाली कुर्सी पर लद कर इधर-उधर जांच कराते-कराते तिवारी जी लस्त हो गए थे। कुच-कुची दाढ़ी वाले चेहरे को देख कर सहज ही अन्दाज लगाया जा सकता था कि, यह व्यक्ति बीमार है। रूग्ण शरीर को चंचल मन मीलो घसीट कर ले जाता है पर बीमार मन के आगे बलिष्ट से बलिष्ट शरीर की एक नहीं चलती। तिवारी जी जब घर से चले थे तो तन रोगी था, यहाँ पहुंच कर तन और मन दोनो बीमार हो गया था।

तिवारी जी को जब डाक्टर साहब के कैबिन में दुबारा लाया गया तो तिवारी जी लस्त हो चुके थे। उनके भीतर बोलने की इच्छा भी शेष न थी। पर डाक्टर साहब के चेहरे पर तेज भी बरकरार था।

तिवारी जी को देखते ही डाक्टर साहब चहके थे- "तिवारी जी आपके युरिन ब्लैडर का पत्थर पर्याप्त बड़ा हो चुका है। इसका एक मात्रा इलाज लिथोस्ट्रेप्सी ही है। आपको तत्काल लिथोस्ट्रेप्सी कराना होगा। क्योंकि यही इसका एक मात्राइलाज है वर्ना आपको कैंसर हो जाएगा।"

"कैंसर..."-झुलनिया का चेहरा एक दम फक्क पड़ गया था। पर, तिवारी जी का चेहरा निर्विकार था। लेकिन चिन्ता तैर रही थी। यही फर्क है स्त्री और पुरुष में। स्त्री भावना में बह जाती है तो पुरुष यथार्थ के साथ अटल खड़ा रहता है। तभी तो तिवारी जी इलाज कराने के स्थान पर इलाज से बचने का उपाय खोज रहे थे। वो डॉ . रतलानी के सामने रिरिया रहे थे- "अभी उत्ता पैसा लेकर तो नहीं चले हैं अगर कुछ दवा लिख देते तो.... फिर आकर करा लेगें। लिथोट्रेप्सी वैसे लखन चाचा बता रहे थे कि, जडी़-बूटी से भी पथरी गल जाती है।

तिवारी जी की बात सुन कर डॉ . साहब एक दम तिलमिला गए थे। हालांकि वाणी कोमल थी पर लहजा सख़्त था- "मेडिकल साइंस जब आसमान की ऊंचाई छू रहा है तब तुम जड़ी-बूटी के चक्कर

में पड़े हुए हो.... बीबी साड़ी खरीदने को कहेगी तो जान देकर कहीं से भी ले आओगे पर जान की खतिर दमड़ी निकालने में परेशानी हो रही है।"

डॉ . साहब की बात सुन कर झुलनिया थोड़ा सकुचाई थी। सिर से सरक रहे आंचल को ठीक करते हुए कुन-मुनाई थी- "जब डाक्टर साहब कह रहे हैं तो इलाज कराने में क्या हर्ज है।"

चौतरफा दबाव पड़ता देख तिवारी जी को कुछ भी कहते न बना। न हाँ में चैन था, न ना में बहुत संकोच करके कहे थे – "डॉ . साहब अभी आफिस से छुट्टी ले कर नहीं आए है... आप अगर हिसाब बता देते तो हम लोग सब व्यवस्था करके आ जाएगें।"

"अब तुम्हारी जैसी मर्जी"- डाक्टर साहब एक दम झुझंला गए थे। "दर असल तुम लोगों के साथ यही समस्या है। तुम लोग तब तक इलाज नहीं कराना चाहते जब तक मौत सामने खड़ी न हो जाए। वैसे भी पत्थर इतना बढ़ चुका है कि, कैंसर अब हुआ कि तब।"- समझो डॉ . साहब समझाने का अंतिम प्रयास करते हुए रोग की गंभीरता को डाइग्राम बना कर समझा रहे थे। जिसे देख कर झुलनिया के माथे पर पसीने की हल्की बूंद उग आइ थी।

सारे संकोच छोड़ कर झुलनिया ने कहा था- "डाक्टर साहब इनकी बात छोड़िए हमको बताइए कितना तक में हो जाएगा इनका लिथोट्रेपसी... । झुलनिया आवश्यकता के हिसाब से खूल गई थी।

"वैसे तो तीस हजार रूपये लग जाते हैं... लेकिन आपके लिए कुछ कम हो जाएगा।" – डॉ . साहब के चेहरे पर अब बजरिया उतर आया था।

तीस हजार सुनकर झुलनिया के चेहर पर अचानक रात उतर आई थी। क्षण भर को लगा मानो काठ मार गया हो पर हिम्मत कर के बोली- "तीस हजार बहुत है।"

"साहब.... अगर इजाजत हो तो हम लोग दस मिनट में बाहर से आते है थोड़ा आपस में राय सलाह कर लें।"- झुलनिया थोड़ा हड़बड़ाई थी।

कहीं जाल में फंस रही मछली फिसल न जाए सोच कर डॉ . साहब ने भाव एक दम से तीस से बीस पर ला दिया था।

बाज़ारवाद के इस युग में यदि व्यापारी होशियार हुए हैं तो ग्राहक भी कम नहीं हैं। ग्राहक अब पहले जैसा चेतना शून्य नहीं रह गया है। बाजार भाव को अचानक दस हजार गिरता देख झुलनिया सजग हो गई थी- "बीस में कहाँ बनेगा साहब दवा-दारु किराया भाड़ा आना-जाना के लिए भी कुछ बचेगा तब तो।"

अब तिवारी जी भी थोड़ा खुल गये थे वैसे भी झुलनिया बीच में कूद पड़ी थी वर्ना... कहाँ तो ईलाज कराते कहते हैं न उच्च वर्ग स्वास्थ्य के लिए लाखों की चिंता नहीं करता तो निम्न वर्ग दमड़ी के आगे स्वास्थ्य की चिंता नहीं करता।

मोल-मोलाई हाँ-ना करते कारते बात चौदह हजार पाँच सौ में तय हुई। तय क्या हुई डाक्टर साहब ने तेरह हजार जमा भी करा लिया। रही डेढ़ हजार की तो झुलनिया ने पूरी विनम्रता का उपयोग करते हुए कहा था –"डाक्टर साहब डेढ़ हजार कल जमा करा देंगे घर से तो इत्तै लेकर चले हैं। और कहें तो अभ्भी के अभ्भी हम दोनो जा कर डेढ़ हजार ले आते हैं।"

"नहीं-नहीं ऐसी कोई बात नहीं है... पैसा कहां भागा जा रहा है।"- डॉ . रतलानी के चेहरे पर स्मीत की हल्की रेखा कौंध गई थी।

पैसा जमा होते तक तिवारी जी डाक्टर साहब के लिए ग्राहक थे, पर पैसा जमा हो जाने के तत्काल बाद पेसेंट हो गए थे। वैसे भी कुछ रोगों में ग्राहक और पेसेंट के बीच पतली सी रेखा होती है। ग्राहक दुकान से निकला कि नहीं दूसरा बजरिया झट लपक लेता है। वैसे भी क्लिनिक से निकलने के बाद पेशेंट दुबारा क्लिनिक की ओर झाँकता कहाँ है। फिर मामला यदि कम में निपट गया तो तुरंत पैसा वापस करो अब किसी का पैसा पचा पाना भी आसान नहीं है।

तभी तो इधर पैसा जमा हुआ उधर घंटी बजी- "पेशेंट को लिथियोस्ट्रेप्सी के लिए ले जाओ और हाँ, गुड्डू को भेजो जरा।" - डाक्टर साहब की आवाज़ में जाने कहां से सख्ती आ गई थी।

"गुड्डू पेशेंट का पेमेंट क्लियर नहीं हुआ है लिथोस्ट्रेप्सी के बाद कैथेटर लगा देना। यदि ज्यादा ना-नुकुर करे तो तो दर्द का इंजेक्शन लगा देना सो जाएगा तो एडमिट करा लेंगें। और सुनो, सारे फॉरमेल्टी पर साइन जरुर करा लेना आज कल बहुत टेंशन है।"- डाक्टर साहब का चेहरा निर्विकार था।

कहाँ पत्थर है कितना बड़ा पत्थर है इस विषय पर बात करने की आवश्यकता न डाक्टर साहब ने महसुस किया न गुड्डू ने पूछना उचित समझा चलते-चलते बस इतना ही पूछा- "सर यदि पेसेण्ट को पेशाब में तकलीफ न हो तो भी कैथेटर लगाना है क्या?"

गुड्डू का प्रश्न तो सहज था पर जाने क्यों डाक्टर साहब तमतमा गए थे। झिड़कते हुए कहा था- "यार तुमसे जितना कहा जाए उतना ही किया करो।"

डॉ . साहब के सामने प्रतिकार करने की हिम्मत तो गुड्डू में न थी और भीतर बह रहे लावा को कहीं न कहीं तो निकलना ही था इसके लिए तिवारी जी से बड़ा अवलम्ब कहाँ मिलता इसलिए तिवारी जी को देखते ही खिसियानी बिल्ली खम्भा नोचने लगी। पिनकते हुए बोला- "क्यों जी पेशाब लग रहा है ?" - अचानक हुए अनपेक्षित खीझ भरे सवाल से तिवारी जी थोड़ा सकपका गए थे।-"हाँ भइया लग तो रहा है पर परेसर उतना तेज नहीं है।"

"ठीक है.. ठीक है चलो पैंट उतार कर वहाँ लेट जाओ... जल्दी करो और भी काम है।"- गुड्डू लगतार पिन-पिना रहा था।

गुड्डू की बात सुन कर तिवारी जी थोड़ा असहज हुए थे। लगा बहुत बदतमीज नौकर है। फिर मन को तसल्ली दिया – यही फर्क है पढ़े लिखे और बे पढ़े में अभी दो मिनट पहले डाक्टर साहब कितना प्यार से बात कर रहे थे। और यह नौकर होकर सीधी मुंह बात नहीं कर रहा है। एक बार तो मन किया अच्छी तरह फटकार लगा दें फिर सोचा मुर्ख से कौन जबान लड़ाए निर्धन है बेचारा किसी कारण वश खीझा होगा फिर कौन सा इसके साथ हिस्सा बांटना है। नौकर तो नौकर ही होगा। "अरे तुम काहे झल्ला रहे हो भाई डाक्टर साहब आएगें तभी ना।" -तिवारी जी नम्र थे पर गुड्डू की पिनक कहाँ कम हुई थी। "इसके लिए किसी डाक्टर-वाक्टर की आवश्यकता नहीं पड़ती। डाक्टर बस पैसा वसुलता है, तुम्हे जैसा कहा जा रहा है वैसा करो।"- गुड्डू उपकरणों को व्यवस्थित करता हुआ बड़-बड़ाए जा रहा था।

"तुम पैंट खोल कर वहाँ लेट जाओ पैंतालिस मिनट में पेट में जमा सारा पत्थर पेशाब के साथ बह कर बाहर आ जाएगा।"

तिवारी जी भी बेबस थे तू-तड़ाक बहस चर्चा का कोइ फायदा न था। इसलिए बताए गए टेबल पर पैंट सरका कर पड़ गए थे। वैसे भी रोगी ग्रहण लगा सूरज होता है, जिसमें न तेज होता है न रोशनी। विज्ञान का चमत्कार देखिए मात्रा पैंतालिस मिनट में ही वर्षों से अन्दर जमा पत्थर पेशाब के साथ बल-

बला कर बाहर आ गया था। युरिन पॉट में पेशाब के साथ निकले काले-काले पत्थर के टुकड़ो को देख कर तिवारी जी को लगा मानो स्वर्ण कनी चमक रहे हो। नयन कटोरे अश्रु जल से लबा-लब हो गए थे। तभी तो तिवारी जी ने मान मनौवल कर के झुलनिया को अपने पास बुला लिया था। सुख या दुख में जब अपना दिख जाए तो भावना की उत्ताल तरगें वेगवती हो ही जाती हैं वह तो मार्ग में आने वाले सारे उबड़-खाबड़ को उखाड़ती-पछाड़ती आखों के रास्ते बह निकलती हैं। तिवारी जी के साथ भी वही हुआ झुलनिया को देखते ही न अस्पताल देखा न लोक-लाज की चिन्ता की लगे पत्नी से लिपट कर रोने। होश तो तब आया जब गुड्डू पिनक कर बोला –"अब अगर बीबी के प्यार से मन भर गया हो तो यह सब नाटक नौटकीं बाहर जा कर करना एक तुम ही नहीं हो।" गुड्डू की उष्णता से तिवारी जी थोड़ा झेंप भी गये पर उल्टा झाड़ते हुए बोले- "तुम्हे क्या पता है भाई, दर्द का हाल तो वही जानता है जिसको दर्द होता है। अच्छा छोड़ो बताओ पेशाब घर कहाँ है ? मुझे फिर से पेशाब लग रहा है।" - तिवारी जी ज्यादा बहस कर के अपनी खुशी कम करना नहीं चाहते थे।

अबकि बार पेशाब के साथ पत्थर के बारीक टुकड़े फिर से निकल आए थे जिन्हे बिना घिन्नाए तिवारी जी ने बटोर लिया था। -"देख तो रे झुलनिया कित्ता कड़ा पत्थर था।"

"तभी तो परेशान कर रहा था आपको, चलिए घर चल कर महादेव जी को घी का चिराग दिखा दीजिएगा, और बकरी वाले बाबा को धोती पहिना दीजिएगा। सब उन्ही के अर्शिबाद का फल है।"- झुलनिया चहकी थी।

इस बार बकरी वाले बाबा के नाम पर भी तिवारी जी ने कोई प्रतिकार नहीं किया था क्योंकि प्रतिकार यानि तकरार और अभी तिवारी जी कोई खटराग नहीं चाहते थे। मारे खुशी के तिवारी जी फुदक ही रहे थे, कि, कर्कश आवाज के साथ गुड्डू आ धमका था- "तिवारी जी चलो तुम्हे कैथेडर लगाना है।" गुड्डू का चेहरा निर्विकार था।

"कैथेटर... कैथेटर काहे के लिए भईया।"- तिवारी जी अकचकाए थे।

"ताकि पेशाब आराम से हो और टूटा हुआ पत्थर भीतर अटक न जाए इस लिए तुम्हे कैथेडर लगाना पड़ेगा।"- गुड्डू के चेहरे पर न हर्ष था न विशाद।

"लेकिन भईया हमें तो पेषाब आराम से हो रहा है कोई तकलीफ नहीं है।"-तिवारी जी अभी भी घबराए हुए थे।

"डाक्टर साहब ने जैसा कहा है मैं वैसा ही तो कर रहा हूँ।"- झुलनिया को दवा का पुर्जा थमाते हुए गुड्डू झुंझलाया था। वैसे भी तिवारी जी गुड्डू के लिए मात्रा एक केस थे और कुछ नहीं फिर आदमी दूसरो की खुशी में कितना नाचे और दूसरे के दुख में कितना मातम मनाए वैसे भी दुख-सुख का कारण तो व्यक्तिगत होता है।

कैथेटर क्या होता है तिवारी जी भली भांति जानते थे। एक बार पिता जी का पेशाब रुक गया था तो डाक्टर ने उन्हे कैथेटर लगा दिया था। हाथ में पेशाब की थैली लटकाए घुमते रहते थे, खाते-पीते उठते-बैठते पेशाब देख कर मन घिन्ना जाता था। "भईया अभी तो पेशाब आराम से हो रहा है अगर आवश्यकता होगी तो हम स्वयं आपसे कह कर कैथेटर लगवा लेंगे।"- तिवारी जी एक बार फिर रिरियाये थे।

"सब डाक्टरी तुम्ही कर लोगे तो हम लोग यहाँ बैठ कर क्या करेंगे..? लो कर लो तुम्ही डाक्टरी मैं जा रहा हू चना-मुर्रा बेचने।"- गुड्डू पिनक कर बोला था।

तिवारी जी का इलाज होते-होते शाम उतर आई थी, हालांकि, स्टोन क्लिनिक के चम-चमाते कमरे में कभी रात होती होगी इसकी कल्पना भी नहीं की जा सकती थी। वो तो रोशनदान पर तिनका-तिनका जोड़ कर बनाए गये घोंसले में गौरेया दुबकने लगी थी जिसे देख कर तिवारी जी को लगा था कि, शाम उतर आयी है। सात-आठ कमरो वाला 'असरा' जन शून्य हो चुका था। मनुष्य के नाम पर तिवारी जी झुलनिया दरबान और खिच-खिच करने वाला वही एक गुड्डू बचा था। तिवारी जी के लिए तो शहर भी अनजान ही था। बस ठौर के लिए दूर के दीदी-जीजा रहते थे जिनके यहाँ कुछ पैसा-कौड़ी और कपड़ा लत्ता छोड़ आए थे। अनजान शहर में रुकने का ठौर गया था यही क्या कम है फिर जीजा जी अस्पताल छोड़ने भी आए थे बात अलग है कि, छुट्टी न होने की वजह से रुक नहीं पाए थे। शाम को जरुर आएंगे ऐसा कह कर गए थे। तिवारी जी का मन घबराया अगर कैथेटर लगा दिया गया तो दीदी के घर जाना मुश्किल हो जाएगा पेशाब की थैली लिए-लिए अनजान शहर में कहाँ-कहाँ भटकेंगे इतना पैसा भी नहीं है कि, होटल में ठहर जाएं। तभी तो हाथ जोड़ कर एक बार फिर रिरियाए थे, भईया हमे पेशाब अराम से हो रहा है, बस थोड़ा बहुत जलन है हो सकता है दवा से ठीक हो जाएगा। अगर तकलीफ बढ़ेगी तो हम तत्काल आ जाएंगे।

"हाँ भईया ये ठीक ही कह रहे हैं। लिजिए हम इंजेक्शन ला दिए हैं इन्हे लगा दीजिए। दिन-भर इधर-उधर घुम रहे हैं इन्होने कुछ खाया पिया भी नहीं हैं, देखिए तो सही इनका मुंह कैसा सूख जा रहा है।"-झुलनिया भी घिघियाई थी।

पर गुड्डू कहाँ मानने वाला था उसका भी तो पेट था, उसके बच्चे भी उसके लौटने का इंतजार कर रहे थे। इधर हुक्म उदुली की उधर नौकरी हाथ से गई फिर तिवारी जी थोड़ी अएगें पेट चलाने। पेट के लिए हाथी स्टूल पर चढ़ जाता है फिर यह तो गुड्डू था। तभी तो थोड़ा समझा-बुझा कर थोड़ा डांट-डपट कर तिवारी जी को बेड पर लिटाया, परदे का आड़ किया और कच्छा उतार कर कैथेटर लगा दिया।

कैथेटर लगते ही तिवारी जी को लगा मानो कैथेडर का पाइप अंदर जा कर भूंसे की ढेर पर रख दिया गया हो जिससे अंदर का पेशाब अंदर ही अटक गया था। कैथेटर लगने के लगभग बीस मिनट बाद ही तिवारी जी का हाल बुरा हो गया था। वो दर्द से छटपटाने लगे थे।

"भईया हमे बहुत दर्द हो रहा है हमारी तो जान निकली जा रही है, इसे निकाल दो भले हमारा सब कुछ ले लो"- तिवारी जी रिरियाये थे।

पर गुड्डू को कहाँ फर्क पड़ने वाला था, उसके सामने तो डाक्टर साहब का हुक्म लुढ़क रहा था। पेमेंट क्लियर नहीं है कैथेटर लगाना है।

झुलनिया भी तिवारी जी की तकलीफ देख कर घबरा गई थी- "भईया इनका दर्द देखा नहीं जा रहा है। आप इनका कैथटर निकाल दीजिए अभी तो भले-चंगे थे और अब...!"

ऐसा नहीं था कि, गुड्डू राक्षस कुल जन्मा राक्षस हो, तिवारी जी के दर्द से वह भी द्रवित हुआ जा रहा था। पर समझ नहीं पा रहा था कि, तिवारी जी क्यों इतना हाय तौबा मचा रहे हैं। आज तक सैकड़ो लोगों को कैथेटर लगाया पर किसी ने इतनी शोर नहीं मचाई कैथेटर लगने से तो पेशाब आराम से निथर कर थैली में आ जाता है। अब दसवीं पास गुड्डू कितना समझ पाता देखते-देखते डाक्टरी सीख गया था। उसे क्या पता था कैथेटर का नंबर भी होता है। गलत साइज का कैथेटर भीतर जा कर चूरा हुए पत्थर के टूकड़े में फंस गया था। यही कारण था कि, अन्दर का पेशाब अन्दर ही अटक गया था। क्योंकि, क्लिनिक में प्रवेश करने से ले कर लिथोस्ट्रेप्सी करते तक लग-भग सात गिलास पानी तिवारी जी को पिला

दिया गया था इस लिये भीतर से पेशाब भी अपना पूरा दबाव बना रहा था। यही वजह था कि, तिवारी को असहनीय पीड़ा हो रही थी।

तिवारी जी की पीड़ा और छट-पटाहट से घबरा कर गुड्डू ने दर्द का दो इंजेक्शन एक साथ लगा दिया था। वैसे डाक्टर ने एक इंजेक्शन ही लगाने को कहा था, पर अपने अनुभव के आधार पर और दर्द की अधिकता देख कर गुड्डू को दो इंजेक्शन लगाने में कोई बुराई नजर नहीं आई। अब डाक्टर साहब भी तो क्लिनिक में नहीं थे कि, जा कर पूछता सोचा दर्द का इंजेक्शन लगाने से मरीज को आराम हो जाएगा और पेशाब कैथेटर से निथरता रहेगा। पर कहाँ इधर इंजेक्शन लगा उधर दस मिनट में ही तिवारी जी की आवाज लड़खाने लगी। झुलनिया हड़बड़ा कर नाक दबाती मुंह में पानी डालती चीखती-चिल्लाती रही पर उसकी सुनता कौन अब तो तिवारी जी भी अचेत हो गए थे। मरीज की हालत बिगड़ती देख गुड्डू भी सायकल ले कर फरार हो गया था। अस्पताल में दरबान और एक चौकीदार को छोड़ कर कोई नहीं बचा था।

रात अपना बोरिया-बिस्तर ले कर आ चुकी थी। नया शहर न जान न पहचान दूर के रिश्ते दार का क्या भरोसा औरत की जात अब रोने सिसकने के अलावा बचा ही क्या था। तिवारी जी का शरीर धीरे-धीरे फूलने लगा था, चेहरा पीला पड़ गया था। गुड्डू ने डाक्टर साहब को खबर तो कर दिया था, पर उन्हे आने में पर्याप्त विलंब हो चुका था।

पर डाक्टर तो डाक्टर होता है उसे माजरा समझते तनिक समय नहीं लगा। डाक्टर साहब ने तत्काल कैथेटर खींच कर निकाल दिया कैथेटर निकलते ही भीतर जमा पेशाब बल-बला कर बाहर निकल आया था। मानो नाली से घंटो जमा पानी निकल रहा हो।

झुलनिया को भी सब कुछ समझ आ गया था, भीतर दुख का सागर झंझावातो से भरा हुआ था। पर बाहर से सख्त होना मजबूरी थी। कुछ लोग मिल कर तिवारी जी को हास्पिटल के दालान में ले आए थे। दूर के रिश्तेदार भी आ चुके थे। झुलनिया डाक्टर साहब से बस इतना ही कह पाई थी- "आपका डेढ़ हजार कल भिजवा देंगे।